International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 03-04-2019; Accepted: 06-05-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 4; July 2019; Page No. 08-10

उड़ीसा में वैष्णव भक्ति आंदोलन और उड़िया जात्रा तथा धनु जात्रा

डॉ. कुमार गौरव मिश्रा
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, झारखंड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, ब्राम्बे, रांची, झारखंड, भारत।

सारांश
उड़िया का प्रचलित लोकनाट्य 'जात्रा' सीधे तौर पर बंगाली जात्रा से प्रभावित है। जात्रा बंगाल, बिहार, असम, उड़ीसा, त्रिपुरा का लोक मनोरंजन का अत्यंत ही सशक्त माध्यम है। जात्रा का जन्म बंगाल में हुआ। जात्रा का उद्भव वार्षिक महोत्सव से हुआ। गीत गोविंद कृष्ण यात्रा के रूप में एक व्यापक जनता के मध्य मनोरंजन का माध्यम है। अधिकतर विद्वानों ने माना है कि यात्रा का प्राथमिक स्रोत गीत गोविंद है लेकिन पुख्ता तौर पर किसी ने स्पष्ट नहीं माना कि यात्रा का जन्म उड़ीसा में हुआ। पूर्वी भारत में कृष्ण यात्रा के जन्मदाता के रूप में भक्तिकाल के प्रसिद्ध संत चैतन्यदेव को माना जाता है।

मूल शब्द : उड़ीसा, जात्रा, धनु जात्रा, चैतन्य देव, शंकर देव, संस्कृति, कीर्तन, इतिहास।

प्रस्तावना

बंगाल की भांति ही उड़ीसा में चैतन्यदेव के संकीर्तन से जात्रा की परंपरा का सूत्रपात हुआ। चैतन्यदेव विभिन्न स्थानों पर राधा-कृष्ण प्रेम भावना को प्रसारित करते थे। उड़ीसा में इस संकीर्तन ने जात्रा परंपरा को जन्म दिया।

नृत्य एवं हरिनाम संकीर्तन ओडिशा में पुरी में जब चैतन्य महाप्रभु निवास कर रहे थे, तो प्रवास के दौरान रथयात्रा के दिन चैतन्य महाप्रभु कुल 7 टोलियां बनाकर हरिनाम संकीर्तन करते थे। उन टोलियों में दो-दो मृदंग, ढोल-नगाड़े बजाने वाले कीर्तनकार होते थे। सभी भक्त जगन्नाथ जी के रथयात्रा उत्सव को देखकर नाचते थे और उसी धुन में मस्त होते। चैतन्य महाप्रभु का हरिनाम संकीर्तन चैतन्य महाप्रभु की लीला के कारण सभी टोलियों में सम्मिलित भक्तों को ऐसा आभास होता था कि चैतन्य महाप्रभु उनकी टोली का नेतृत्व कर रहे हैं। सभी भक्तों को चैतन्य महाप्रभु के साथ नृत्य एवं हरिनाम संकीर्तन करने में आत्मिक आनंद एवं प्रभु मिलन का सुख प्राप्त होता। रथयात्रा के दौरान चैतन्य महाप्रभु रथ पर विराजमान जगन्नाथ जी के दिव्य स्वरूप को देखकर आनंद के आंसू बहा रहे थे और उनकी आंखों से अश्रुधारा निकल रही थी। उन अश्रुधाराओं में आसपास खड़े सभी भक्त भीग गए। भक्त उन अश्रुधाराओं को अमृत मान पीकर स्वयं को कृष्ण भक्ति से ओतप्रोत करने लगे। चैतन्य महाप्रभु की ऐसी दिव्य लीलाओं को देखकर जगन्नाथ भगवान का रथ रुक जाता था। चैतन्य महाप्रभु हरि बोल, हरि बोल के उद्घोष करते रथ यात्रा में अपनी योग शक्ति का परिचय देते थे। जो भक्त चैतन्य महाप्रभु को संकीर्तन के इस महास्वरूप में देखता, वह भक्त हरि बोल, हरि बोल कह उठता। संकीर्तन में चैतन्य महाप्रभु इतने मस्त हो जाते थे कि यदि जमीन पर गिर पड़ते तो वहां भी लोट-लोट कर प्रभु संकीर्तन और ऐसा दिव्य दृश्य प्रस्तुत करते कि मानो कोई स्वर्ण पर्वत भूमि पर लोट रहा है। इतना ही नहीं, इस अवस्था में उनके शरीर पर यदि कोई पांव रख कर भी गुजर जाता तो भक्ति भाव में अत्यंत मस्त होने के कारण उन्हें पीड़ा न होती। ऐसा प्रतीत होता जैसे भगवान ने अपनी शक्ति की किरण अपने भक्त में डाल दी हो। चैतन्य महाप्रभु के इस नृत्य को देखकर भगवान जगन्नाथ अति प्रसन्न होते।

जगन्नाथ रथयात्राओं एवं प्रभातफेरियों में चैतन्य महाप्रभु का नाम लेकर 'निताई गौर हरि बोल' का उद्घोष करके संकीर्तन शुरू किया जाता है। नाचो-गाओ, हरिनाम कीर्तन में मस्त रहो, ईश्वर मूर्तियों में मिले तो वाह-वाह वरना वह तुम्हारे मन में, वचन और कर्मों में सदा तुम्हारे साथ है। उसके नाम पर निर्भर जियो। चैतन्य ने नाच-गाकर कृष्ण नाम लेने वाले दीवानों के जुलूस निकलवा दिये। आतंक से जड़ीभूत जन-जीवन को श्री चैतन्य ने फिर से नवचैतन्य प्रदान किया। श्री चैतन्य अपने देशकाल का प्रतीक बनकर अवतरित हुए थे।

चैतन्यदेव का यह संकीर्तन ही जात्रा रंगमंच है, जिसे यात्रा भी कहा जाता है। उड़ीसा में विभिन्न स्थानों पर जात्रा का प्रदर्शन किया जाता है। इसके साथ ही उड़ीसा के कला रूपों पर वैष्णव का प्रभाव विशिष्ट रूप से जयदेव के गीतगोविंद का भी है।

उड़ीसा का प्रचलित नाट्य रूप 'जात्रा' एवं 'धनु जात्रा'

विभिन्न विद्वानों का मत है कि उड़िया का प्रचलित लोकनाट्य 'जात्रा' सीधे तौर पर बंगाली जात्रा से प्रभावित है। जात्रा बंगाल, बिहार, असम, उड़ीसा, त्रिपुरा का लोक मनोरंजन का अत्यंत ही सशक्त माध्यम है। जात्रा का जन्म बंगाल में हुआ। इस संदर्भ में विद्वानों के मत इस प्रकार है-

> "Through the jatra is equaly popular in Orissa and eastern parts of Bihar (two bordering states), It originated in Bengal"[1]

कपिला वात्स्यायन कहती हैं-

> "The origin of Oriya or Bengali Yatra are somewhat hazy and the discussion has been full of controversies and widely divergent views।"[2]

विभिन्न मतों के मध्य एक बात विशिष्ट रूप से उभरकर आती है कि बंगाल, बिहार, उड़ीसा की कलाओं पर जयदेव के गीतगोविंद का प्रभाव है।

12 वीं सदी के कवि जयदेव, बंगाल के शासक लक्षमण सेन के दरबार के कई अन्य कवियों के समकालीन थे और वे बहुत कम उम्र में ही उच्चस्तरीय शब्दों के साथ संस्कृत पदों की रचना करने लगे थे। जयदेव आगे कहते हैं

कि उनके मन में वाग्देवी का निवास है और वह अपनी धुन और ताल पर पद्मावती को नृत्य करने के लिए विवश कर देने वाले राजा हैं। पौराणिक कथा के अनुसार, पद्मावती पुरी के जगन्नाथ मंदिर की नर्तकी (देवदासी) थी और जयदेव ने उससे विवाह किया और फिर वह वहीं बस गए ताकि भगवान की भक्ति के साथ पद्मावती की देखभाल भी कर सकें। देवदासी नृत्य की यह प्रथा पुरी के जगन्नाथ मंदिर में आज तक जारी है। इस संदर्भ का वर्णन भी गीतगोविन्द की प्रस्तावना वाले श्लोकों में किया गया है जहां वह कहते हैं कि जिनकी रुचि हरि स्मरण में है और जिन्हें प्रभु की प्रेम लीला में आनंद प्राप्त होता है वे गीतगोविन्द काव्य का रसपान कर सकते हैं।

गीतगोविन्द काव्य एक गीति काव्य है जिसमें एक ओर तो प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण और राधा की प्रेम लीलाओं का नाटकीय प्रस्तुतिकरण किया गया है लेकिन साथ ही गहराई में जाने पर यह परमात्मा के साक्षात्कार के लिए आत्मा की विकलता और अंततः स्वयं को परमात्मा की सेवा में लीन कर देने का भाव बन जाता है। यह भाव ईश्वर साक्षात्कार और श्रृंगार दोनो ही दिशाओं में प्रवाहित होता है और गीतगोविन्द के गीत दोनों ही अर्थों में सटीक बैठते हैं।

क्योंकि गीतगोविन्द की रचना विशेष तौर पर भगवान जगन्नाथ के रात्रि पूजन के दौरान किए जाने वाले नृत्य प्रस्तुति के लिए की गई थी, इसलिए इसकी रचना इस दक्षता के साथ की गई कि इसे नृत्य कलाकारों के पैरों की ताल के साथ गाया जा सके। काव्य के अन्त में पुनः इस तथ्य को व्यक्त करते हुए कवि ने कहा है कि इस काव्य की रचना भगवान विष्णु की भक्ति के एक माध्यम के रूप में की गई है और इसे कृष्ण में लीन कवि जयदेव पंडित द्वारा श्रृंगार रस के आवरण में लपेट दिया गया है। यह काव्य इतना लोकप्रिय हुआ कि एक शाताब्दी से भी कम समय में पूरब से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक देश के सभी भागों में इस काव्य का प्रसार हुआ और इसे नृत्य, संगीत, चित्रकला की विधाओं में ढालने के साथ-साथ मंदिरों की पूजन प्रक्रिया में भी इसका व्यवहार किया जाने लगा।

पश्चिम के विद्वान हेर्टेल, कोनो और कैथ, गीतगोविंद के प्रभाव को प्रमुखता से रेखांकित करते हैं और ज़ोर देकर इस बात को कहते हैं कि यात्रा नाटकों पर जयदेव के गीतगोविंद का प्रभाव है। इनमें कैथ कहते हैं-

> "As in Jaydev's Gita Govinda we have the literary form of the expression of the substance of the yatra, lyrics songs, and to this must be addeds, that claim of the music and dance।"[3]

आलोचक एम।एल। देशपांडे यात्रा नाटकों को 'देव यात्रा' में खोजते हैं, जिसका जिक्र विष्णु धर्मोत्तर पुराण में हुआ है। इस पुराण के अनुसार मंदिर के बाहर नृत्य, संगीत एवं नाट्य संवाद के माध्यम से भक्ति प्रस्तुत होती थी। संभव है कि इसी से यात्रा का स्वरूप बना। हमें ज्ञात हो कि ग्रीक के डायनोसिस, जो कि ग्रीक के चर्चित ईश्वर है के राष्ट्रीय महोत्सव में यही स्वरूप था। नाटककारों के अनुसार नाट्य प्रदर्शनों का उद्भव इसी प्रकार हुआ।

वरदपाण्डेय पूरी की रथ यात्रा, चन्दन यात्रा एवं साही यात्रा पर प्रकाश डालते हैं, जो कि इस परंपरा का अंग है।

> "Historically, The yatra as a dramatic form, owes its existence to the Krishna Bhakti Cult of Bengal। The Dramatic Poems such as Jaydev's Gita Govinda and Babu Chandidasa's Krishna Kirtan (15th Century) set the background।"[4]

यात्रा के अधिकतर जानकारों एवं इसपर शोध करने वालों ने माना है कि जात्रा का उद्भव वार्षिक महोत्सव से हुआ। गीत गोविंद कृष्ण यात्रा के रूप में एक व्यापक जनता के मध्य मनोरंजन का माध्यम है। अधिकतर विद्वानों ने माना है कि यात्रा का प्राथमिक स्रोत गीत गोविंद है लेकिन पुख्ता तौर पर किसी ने स्पष्ट नहीं माना कि यात्रा का जन्म उड़ीसा में हुआ। पूर्वी भारत में कृष्ण यात्रा के जन्मदाता के रूप में भक्तिकाल के प्रसिद्ध संत चैतन्यदेव को माना जाता है।

कहा जाता है कि चैतन्य महाप्रभु स्वयं नाट्य-प्रदर्शन किया करते थे और उन्होंने रूक्मिणी हरण नामक नाटक में रुक्मिणी की भूमिका निभायी थी और इनके अनुयायी विभिन्न चरित्रों के अभिनय करते थे। इसका उल्लेख बृंदाबन दास की कृति चैतन्य भागवत एवं कृष्ण दास की कृति चैतन्य चरित्रामृत में मिलता है। बंगाल के चर्चित लेखक आशुतोष भट्टाचार्य स्वीकारते हैं कि यह बंगाल का पहला यात्रा नाटक है। बाद उनकी प्रेरणा से राय रामानन्द राय ने जगन्नाथ-वल्लभ नामक नाटक एवं रूप गोस्वामी ने नाटकों की रचना की। उड़ीसा के राजा गजपति प्रतापेन्द्र देव ने वैष्णव संतों के कार्यों का विस्तार किया।

पर सच नहीं यह है कि राय रामानन्द राय कृत जगन्नाथ-वल्लभ नामक नाटक रूक्मिणी हरण नामक नाटक से प्रभावित था क्यूंकी 12वीं शताब्दी से ही नियमित रूप से पूरी के मंदिर प्रांगण में अभिनीत किया जाता था। राय इसके नियमित दर्शक थे। न केवल असम के शंकरदेव ने 15वीं शताब्दी में पूरी की यात्रा की बल्कि प्रदर्शन को देखकर अपने यहाँ अंकिया नाट का निर्माण किया। शंकरदेव ने छह नाटक लिखे छिन्न यात्रा, कालियदमन यात्रा, कालीगोपाल नाट, रुक्मणीहरण नाट, पारिजातहरण नाट एवं पत्नी प्रसाद नाट। अधिकतर नाटक कृष्ण कथानक पर आधारित हैं। इसके साथ ही भागवत घर जो कि उड़ीसा में समुदाय संवाद की एक जगह है के आधार पर सम्पूर्ण असम में नामघर की स्थापना की जो आज भी मोजूद है।

वरदपाण्डेय इस संदर्भ में कहते हैं-

> "Shankardev seems to have been influenced by the earlier Krishna Theater that flourished particularly in the Utkla and Mithila regions। Puri was a great center of Vishnava Theater in Eastern India। Apart from the Geet Govinda, Plays like Parijatharan Natak by Gopinath Sandhi Bigrahik, Pravati and Parijat Haran by Kavichandra Ray Divakar Mishra were being performed in the Jagannath Temple on festive occasion। He must have seen these performances during his one-year sojourn at puri around 1490।"[5]

जब कृष्ण यात्रा 15वीं शताब्दी के पूर्व से पूरी के जगन्नाथ मंदिर के प्रांगण में नियमित रूप से प्रस्तुत होती थी तो कैसे चैतन्य देव ने कृष्ण यात्रा को जन्म दिया।

धनु जात्रा

धनु नाम के पीछे इसका अर्थ धनु महीने से है। धनु संक्रांति और मकर सक्रांति के मध्य प्रस्तुत होने के कारण इसे धनु यात्रा कहा जाता है। इसमें कंस अपने भांजों कृष्ण और बलराम को मारने के इरादे से उन्हें यात्रा देखने के लिए आमंत्रित करता है। यह दिसंबर से जनवरी माह में आयोजित किया जात्रा है। 11 दिनों तक चलाने वाली यात्रा आज विश्वप्रसिद्ध है। उड़ीसा के बारगढ़ में प्रस्तुत होने वाली यह यात्रा उड़ीसा की अमूल्य धरोहर है।

उड़ीसा में एक विशेष महोत्सव के दौरान पौराणिक मान्यताओं में मथुरा के शासक रहे 'कंस' के पात्र द्वारा अपने 'दरबार' में सरकारी अधिकारियों के साथ.साथ मंत्रियों तक को तलब करने की परंपरा है। वह सजेधजे हाथी पर बैठकर पूरे शहर की यात्रा भी करता है।

महोत्सव की शुरूआत देवकी और वासुदेव के विवाह से होती है और इसके बाद कृष्ण जन्म और अनेक घटनाक्रमों के साथ अत्याचारी शासक कंस का चित्रण होता है। यहां 'धनु यात्रा' महोत्सव के दौरान कंस का चरित्र अदा किया जाता है, जिसकी थीम महाभारत कालीन 'कृष्णलीला' से ली गयी है, जिसमें कंस अपने भांजों कृष्ण और बलराम को मारने के इरादे से उन्हें यात्रा देखने के लिए आमंत्रित करता है।

संदर्भ

1. Gargi, Balwant, 'Folk Theater of India', P.no. 13
2. Vatsyayan, Kapila, 'Traditional Indian Theater', P.no. 173
3. Keith A.B, 'Sankrit Drama, P.no. 272
4. Varadpandey, M.L., 'History of Indian Theater', P.No. 194
5. Varadpandey, M.L., 'Krishna Theater in India', P.No. 76